# उपनिषदों में निहित मूल मंत्रों का शैक्षिक निहतार्थ

[1]डॉ० आर० पी० मिश्र [2]अमित कुमार सिंह [3]नरेन्द्र कुमार [4]मनीष कुमार मिश्रा

[1]एसोसिएट प्रोफेसर व विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग [2]सहायक आचार्य शिक्षा विभाग [3]शोध छात्र शिक्षा विभाग [4]शोध छात्र शिक्षा विभाग

[1]हिन्दू कॉलेज मुरादाबाद [2]हिन्दू कॉलेज मुरादाबाद [3]हिन्दू कॉलेज मुरादाबाद [4]हिन्दू कॉलेज मुरादाबाद

## सार –:

भारत प्राचीनकाल से ही विवकेशील एंव बौद्धिक रूप से संपन्न लोगों का देश रहा है तक्षशिला एंव नालंदा विश्वविद्यालय भारत के विकसित शैक्षिक परिवेश के द्योतक थें जिन्होने शिक्षा के अंतरराष्ट्रीय केंद्रो के रूप में ख्याति प्राप्त की है व्यापक अर्थो में देखा जाये तो भारतीय ज्ञान के आदि स्त्रोत हमारे प्राचीन उपनिषद एंव वेद ही है। जो हमारे जीवन को सार्थकता प्रादान करते हैं। हमारे वेद एवं पुराणें की प्रकिती बड़ी वैज्ञानिक थी। ज्ञान मीमांसा का यह स्वरूप हमारे जीवन की सार्थकता का आदि स्त्रोत रहा है। भारतीय ऋषि–मुनियों ने अपने अथक श्रम एंव समर्पण के आधार पर इन उपनिषदों एंव वेदों की रचना की जिनमें व्यवहारिक एंव सैद्धांतिक दोनो पक्षों का समावेश पाया जाता है। वेद एंव उपनिषद् हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में प्रसांगिक आधार पर आज भी अस्तित्व में है तथा समय अपनी प्रसांगिकता सिद्ध भी करते हैं।

## शब्द बीज–:

उपनिषद, मूल मंत्र, तत्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा, शैक्षिक निहितार्थ, मुख्य उपनिषदों का उद्धरण।

## प्रास्तावना–:

प्राणियों के वाहय अर्थो का प्रकाशन करने वाली तथा नाना प्रकार से उपकार करने वाली अनेक विधाएं हैं, परन्तु परम पुरूषार्थ को प्रकाशित करने वाली , परमार्थ को दिखलाने वाली तथा परम उपकारिणी विद्या उपनिषद है। जिससे जिज्ञासु पुरूषों को परम शान्ति प्राप्त होती है। उपनिषद वस्तुतः वह आध्यात्मिक मानसरोवर है जिससे ज्ञान की भिन्न–भिन्न सरिताये निकलकर इस पुण्य भूमि मे मानव मात्र के ऐंच्छिक कल्याण तथा असंगत के निवारण हेतु प्रवाहित होती है।

*"उपनिष्यते–प्राप्यते ब्रहमात्य भावो अनया इति उपनिषद्"*

अर्थात जिससे ब्रहम का साक्षात्कार किया जा सके वह उपनिषद कहलाती। उपनिषद शव्द की व्युत्पति जो आज अधिक प्रचलित है वह 'उप' एंव 'नि' उपसर्गो से युक्त 'सद' घातु से सिद्ध की जाती है जिसका तार्त्पय है – गुरू के निकट बैठना अर्थात गुरू के द्वारा रहस्यमय ब्रहम विद्या का ज्ञान प्राप्त करना है। वैदिक काल से ही उपनिषदों के रताध्याय की पंरपरा प्रचलित है अतः कुछ उपनिषद तो वेद के ही अंश विशेष हैं तथा कुछ ब्राहमण भाग अरण्यको के अंतर्गत है । युक्तिकोपनिषद मे 108 (एक सौ आठ) उपनिषदो के नाम आते है ।

कठोपनिषद में कहा गया है कि ***"नेषा तर्केणं मतिरानेया"***

अर्थात हम केवल तर्क के द्वारा ही किसी वास्तविक परम तत्व को नहीं प्राप्त कर सकते है। जिस प्रकार अच्छी तरह परिष्कृत किए हुए खेत मे ही बीज बोया जाता है उसी प्रकार साधक के लिए अपने अंतः करण को परिशुद्ध करना आवश्यक है।

"तैत्रीयोपनिषद" की शिक्षा वल्ली शैक्षिक उददेश्यों की दृष्टि से स्वयं में परिपूर्ण है। इस वल्ली से स्नातक को उपदेश देते हुए आचार्य कहते हैं कि हे– स्नातक हमने जो अच्छे कर्म किए है उन्ही का तुम अनुसरण करना। मेरे निंदनीय कर्मो का अनुसरण कभी ना करना। 'मुंडकोपनिषद' मे परम पद तक पहुंचने के लिए कर्म की प्रधानता को स्वीकार किया गया है। कर्म के बिना ज्ञान का उदय नही हो सकता । ज्ञान और कर्म दोनों के सहारे जिज्ञासु अपनी यात्रा मे सफल होता है। इसी के साथ–साथ यह भी नही भूलना चाहिए कि बिना भक्ति के; बिना आत्मसमर्पण के , ना तो ज्ञान प्राप्त होता है और न कर्म करने की प्रवृति होती है। अतः तत्व जिज्ञासु को अपने लक्ष्य तक पहुचने के लिए ज्ञान कर्म तथा भक्ति इन तीनों में समाजस्य रखना परम आवश्यक होता है ।

'तारकोउपनिषद' में गुरू की महिमा बताते हुए कहा गया है कि–"गुरूदेव परमब्रहम गुरूदेव परगतिः।गुरूदेव पराविद्या गुरूदेव परायण अर्थात गुरू ही परम ब्रहम है, गुरू ही परागति है। गुरू ही परा विद्या है, गुरू ही परायण है। इस प्रकार उपनिषदो में गुरू गौरव के अनेको अनेक चित्र उपलब्ध है। जो अपने दिव्य प्रभाव से कुमार्ग गामी व्यक्ति को सन्मार्ग की ओर आकृष्ट करते है। इसी प्रकार उपनिषदो मे जिज्ञासु से यह अपेक्षा की गई है कि वह अपने गुरू के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित हो ।

"मुंडकोउपनिषद" के अनुसार –

*"अनादि मायया सुप्तो,यदा जीवः प्रवुद्धयते।*

*अजम निद्य स्वप्नय,अद्वैत तदा।।"*

अर्थात जिस समय अनादि माया से सोया हुआ जीव जागता है अर्थात तत्व ज्ञान का लाभ प्राप्त करता है उसे समय उसे अज अनिद्र और स्वप्न रहित अद्वैत आत्म तत्व का बोध प्राप्त होता है।

## उपनिषदों में निहित उद्देश्य–:

उपनिषदों में ज्ञान को दो भागों में विभक्त किया गया है । जिसे 'अपरा' एवं 'परा' विद्या के नाम से अभिहित किया गया है 'अपरा' विद्या इस नश्वर जगत तथा आत्मा को धारण करने वाले इस शरीर से संबंधित है तथा 'परा' विद्या आत्मज्ञान अथवा ब्रहम ज्ञान से संबंधित है। उपनिषदों का वर्णन विषय आत्म ज्ञान होने के कारण 'परा विद्या' कि महत्ता स्वीकार की गई है। तथा 'अपरा विद्या' को ही माना गया है। उपनिषदों मे सत्य के आचरण पर बहुत बल दिया गया है।

मुंडकोपनिषद के अनुसार "सत्य प्रिया हि देवाः" अर्थात देवो के सत्य ही प्रिय है। जो लोग मिथ्या भाषण दम्य, कपट से उन्नति की आशा रखते है वे अंत मे बुरी तरह से निराश होते है। इसी कारण बुद्धिमान मनुष्य सत्य भाषण और सदाचार को ही अपनाते है, झूठ को नहीं।

उपनिषदों में मनुष्य को इस बात का उपदेश दिया गया है– "धर्ममचर" अर्थात धर्म का आचरण करो इसी में मानव का कल्याण निहित है। 'छन्दोग्योपनिषद' मे धर्म के तीन भाग बताए गए है, प्रथम 'यज्ञ' द्वितीय 'स्वाध्याय' तथा तृतीय 'दान' है। धर्म की तीसरी शाखा सबसे महत्वपूर्ण हैं।

"तैतीरयोपनिषद" मे कहा गया है –

*श्रद्धा देयम, अश्रद्धा देयम। श्रिया देयम। हिया देयम ।भिया देयम। संविदा देयम।*

अर्थात श्रद्धा से देना चाहिए अश्रद्धा से नही। सौंदयै से देना चाहिए, घृणा से नहीं। ज्ञान पूर्वक देना चाहिए, भय से नही। कठोपनिषद में वर्णित नचिकेता। प्रंसग के द्वारा दान स्वंय को सुख देने

वाली हों। दुःख दायिनी व अनुपयोगी न हो। मनुष्य को ईश्वर का सदा स्मरण करते हुए इस जगत में ममता व आशक्त का त्याग करके केवल कर्तव्य पालन के लिए ही उपदेश दिया गया है। कर्म किए जाएं, परंतु निष्काम होकर अर्थात वासनाओं की तृप्ति के लिए नहीं, वरन उनके उपसम के लिए। अतः मनुष्य को लोकिक सुख को प्राप्त करने का प्रयत्न नही करना चाहिए।

आज व्यक्ति ईश्वर के वास्तविक स्वरूप से अपरिचित है। वह ईश्वर को मस्जिद, मंदिर, गिरजाघर एवं गुरूद्वारो मे खोजता फिरता है फिर भी उसे ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती हैं। इस कारण वह परेशान व चिंतित रहता है। कठोपनिषद में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि – मनुष्य शरीर मे ही आनंद स्वरूप परम ब्रहम परमेश्वर का बास है, प्राणी साक्षात अनुभव के द्वारा भगवत दर्शन कर लेता है।

## शैक्षिक निहितार्थ–:

प्रश्नोपनिषद में यह वर्णन किया गया है कि मनुष्य यदि श्रेष्ठ व उत्तम आचरण करे तो वह अवश्य ही ब्रहमलोक को प्राप्त करता है। भार्गव ऋषि ने महर्षि पिप्पलाद से पूछा कि शरीर को प्रकाशित करने वाले अंग देवों मे सर्वश्रेष्ठ कौन है? उन्होने उत्तर दिया 'प्राण'। इस देह को प्रकाशित करने वाले सभी अंग देव आपस में झगडने लगे और अभिमान पूर्वक परस्पर कहने लगें कि "हमने शरीर को आश्रय देकर धारण कर रखा है।" तब सर्वश्रेष्ठ प्राण ने कहा, – तुम लोग अज्ञान बस आपस में विवाद मत करो। तुम सब में किसी में भी इस शरीर को सुरक्षित रखने की शक्ति नहीं है। प्राण की यह बात सुनकर उन अंग देवतओं को विश्वास नही हुआ। अनन्तः प्राण अपना प्रभाव दिखाते हुए शरीर से अलग होने लगा। शरीर के सभी अंग देव शिथिल होने लगे यह देख कर वाणी, चक्षु, नासिका श्रोत आदि सभी इंद्रियो को विश्वास हो गया कि हम सब मे प्राण ही सर्वश्रेष्ठ है। जिनमें कुटिलता लेश मात्र भी नही हे, जो स्वप्न में भी मिथ्या भाषण नही करते हैं, और असत्य मे आचरण से सदा दूर रहते है, जिनमें राग द्वेष आदि विकारो का सर्वथा अभाव है , जो सब प्रकार के छल कपट से शून्य है, उन्ही को वह विकार रहित विशुद्ध ब्रहमलोक मिलता है।

उपनिषदों में हमें अनेक ऐसे उदाहरण मिलते है जिनसे ज्ञात होता है कि उस काल में नारियों का बहुत सम्मान होता था। केनोपनिषद के अनुसार ***"यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रंमते तत्र देवता"*** अर्थात

नारियों की जहां पूजा होती है वहां देवता निवास करते है। नारी को ***"मातृ देवो भव"*** की संज्ञा दी गई परंतु आधुनिक युग मे नारी को देवी और माता के पद से उतार कर कामुकता का साधन बना लिया है। आवश्यकता इस बात की है कि नीर को उचित सम्मान दिया जाए तभी राष्ट्र की उन्नति संभव हो सकती है।

मनुस्मृति में पाँच ज्ञानेंद्रिय व पाँच कर्मेंद्रिय सहित दस इंद्रिया कही गई है। इसके अतिरिक्त मन 11वीं इंद्रिय है। इसके जीत लेने पर वे दसों इंद्रिया स्वतः जीत ली जाती है। परंतु प्रश्न यह उठता है कि मन पर नियंत्रण कैसे किया जाए तो इसका समाधान उपनिषद में है। कठोपनिषद में इंद्रियों को घोड़े, बुद्धि को सारथी तथा मन को लगाम की उपमा दी गई है। बुद्धि के नियंत्रण से रहित इंद्रियां उत्तरोत्तर उसी प्रकार उछल खल होती चली जाती हैं जैसे असावधान सारथी के दुष्ट घोड़े। अतः जो मनुष्य अपनी बुद्धि को विवके संपन्न बना लेता। उसकी बुद्धि अपने लक्ष्य को ध्यान में रखती हुई नित्य निरंतर निपुणता के साथ इंद्रियों को सन्मार्ग पर चलने के लिए मन को बाध्य करती है।

उपनिषदों में स्थान पर यही शिक्षा दी गई है। कि हम समाज में रहते हुए ना कोई अनुचित कार्य करें ना किसी का अहित करें क्योंकि मनुष्य के लिए सबसे बडा कर्तव्य और प्रशंसा का कार्य यही है कि वह दूसरों के साथ ऐसा व्यवहार करें जिससे उसका चित् प्रसन्न हो। इसके लिए वर्तमान युग में गांधीजी ने तीन बंदरों का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए समझाया है कि मनुष्य को ना तो किसी के प्रति कठोर शब्द बोलना चाहिए, ना किसी की निंदा सुननी चाहिए और ना किसी बुरे कार्य को देखना चाहिए।

***" ईशावास्य उपनिषद " में स्पष्ट लिखा है,***

***"भद्रं कर्येभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्ष शिर्यजत्राः।।"***

अर्थात हम कानों से श्रेष्ठ सुने, आँखों से श्रेष्ठ देखे। और समस्त अंगो द्वारा ईश्वर के प्रिय उत्तम कार्य ही करते रहे। यही उपनिषद का मूल मंत्र है,

## संदर्भ ग्रंथ–:


- उपाध्याय बलदेव– वैदिक साहित्य और संस्कृति, काशी तृतीय संस्करण।
- भगवत दत्त– वैदिक बड़मय का इतिहास, भाग २ए दिल्ली।
- उव्वट एवं महीधर– (भाष्य सहित) यजुर्वेद संहिता, निर्णय सागर प्रेस ,1929
- माधव बैंकट– ऋग्वेद संहिता, सं0 डॉ0 लक्ष्मण स्वरूप लाहौर 1939
- नाथ विश्वेश्वर– ऋग्वेद पर एक ऐतिहासिक दृष्टि , वाराणसी 1968
- त्रिवेदी राम गोविंद– वैदिक साहित्य, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन 1968
- उपाध्याय बलदेव– संस्कृत बाड़मय का वृहद इतिहास वेदखंड (प्रथम ) उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान , लखनऊ 2001
- पांडेय ओमप्रकाश– वैदिक साहत्यि और संस्कृति का समीक्षात्मक इतिहास, द्वितीय संस्करण ,2001 न्यू एज इंटरनेशनल प्राइवेट लिमिटेड पब्लिशर्स।